वैश्वीकरण एवं अर्थव्यवस्था

डॉ0 आशा कुमारी*

भारतीय अर्थव्यवस्था में वर्ष 1991 से वैश्वीकरण का असर दिखाई पड़ने लगा। इसका कारण पाश्चात्य अर्थव्यवस्था की संघीय बाजार की अर्थव्यवस्था के रूप में एक अवतार और केन्द्रीय योजना की अर्थव्यवस्था के स्थिति में परिवर्तन लाना। अर्थव्यवस्था में सुधार आने या न आने का दायित्व राज्य पर। उस समय भारत में नरसिंहा राव प्रधानमंत्री थे और डॉ मनमोहन सिंह वित्तमंत्री। समर्थन जुटाया गया कि विकसित देशों का अविकसित, अर्द्धविकसित और विकासोन्मुख देशों के प्रति प्रेम और छोटी–छोटी रियायतों के द्वारा आधुनिक औद्योगिक अर्थव्यवस्था को सहयोग करना था। आलोचना भी की गई तथा प्रेम को दिखावटी तथा विकसित देशों का सहयोग देने के नाम पर अपना वर्चस्व कायम करना था। प्रभाव के खतरों की ओर ध्यान दिलाया गया : प्रथम, विदेशी पूंजी से प्रथमतः अर्थव्यवस्था का नियंत्रण होता है और द्वितीय मनमानी शर्तों के आधार पर बाजार की स्थिति तय करना। दो पहलू पूंजीवादी देशों का समर्थन लक्ष्य (Setting Goals) को प्रकट न होने देना और जहाँ पूंजी लगायी जा रही है वहाँ तय लक्ष्य (Goals Setting) का उपभोक्ता समान में बखान करना था। वस्तु (Goods), सेवा में (Services), उत्पादन (Production) और वितरण (Distribution) के तरीकों को अर्थव्यवस्था की नई धारण घोषित करना, सरकार की नीतियाँ के सहारे उपभोक्ता समान विस्तार करना तथा बाजारवाद का नारा देकर विश्व या भूमंडल का 'आर्थिक आदत' के कारण संकुचित करना। यह इसलिए होता की पूँजी के अर्थतंत्र को पिछड़े हुये क्षेत्र में स्थान मिलता है तथा विदेशी नियतंत्रण में जो पूँजी होती है उसे स्थानिय लोगों से एकत्र किया जाता है। साथ ही स्थानीय लोग भी बहुराष्ट्रीय कम्पनियों में पूँजी लगाना अधिक लाभदायक मानने लगते हैं।1

इसके समर्थन में अमेरिकी इन्स्टीट्यूट ऑफ इंटरनेशनल इकॉनामिक्स के गेन विलसन ने आर्थिक नीतियों के पक्ष में वाशिंगटन सर्वानुमतता का नारा उछाला,''गरीब देश अधिक समय तक अमीर होने की प्रतीक्षा नहीं कर सकते।''2 ऐसी नीतियाँ में बाजारीकरण का समर्थन जुटाना जिससे बिना प्रतीक्षा किये नागरिकों के जीवन स्तर में सुधार हो सके। इस घोषणा की प्रस्तावना की स्पष्ट मंशा थी पूंजीपति का निजी क्षेत्र (Private Sector) में उत्पादन प्रणाली को लाकर भी कमजोर देशों में सफलता पाने में सफल हो सकी कि गरीब को भोजन, कपड़ा, मकान, शिक्षा और चिकित्सा चाहिये जिसे लेखपाल ऐसे देशों में इसके अभाव में सैकड़ों लाखों संघर्ष होते है जो केवल संघर्ष नहीं बल्कि लाखों का संकट है, मुक्ति चाहिये और लोगों का लुभावने तरीकों ने प्रति मुक्ति पाने के प्रति विश्वास बढ़ा। इसे अमर्त्यसेन ने अपरिहार कार्यो में वित्तीय कोमलता से राजनैतिक छूट और मूक्तहस्त सार्वजनिक व्यय से भद्रतापूर्ण गरीबी निवारणार्थ सहायता का विनिमय विचार कहा है।3

पूरानी स्थिति पर लौट पाना संम्भव न होने के कारण आभाव का आरेखीय करने के उदेश्य से अर्थशास्त्रीय पथ आधारित संन्तुलन का शमाधान व्याप्त के मूल आवश्यकताओं को पूरा करने से जोड़ते है।4 इसी कारण गतिशील अर्थव्यवस्था आरेखीय नही हो सकती।

यह असर सहसा नहीं अगर 1 वर्ष 1991 के पूर्व अमेरिकी वैचारिकी ने 1960 और 1970 के दशकों में मार्क्सवादी प्रकार के संकेन्द्रीकरण के विरूद्ध स्वतंत्रतावाद को उभार दिया। इसका भी फलक स्वायत्त और स्वतंत्र व्यक्ति तथा अहस्तांतरणीय और प्रकृति अधिकारों का उपभोग था। कहा गया स्वतंत्रता पर कोई प्रतिबंध न हो या हो तो केवल स्वतंत्रता की रक्षा के लिए। फ्रीडम के कैपठीलाइन्स एण्ड फ्रीडम, नाजिम के अनारकी स्टेअ एण्ड यूरोपीय, डुवारमिन के टेकिगं राइटस सीरियसली की रचना से स्वतंत्रता वादियों को बल मिला। इसने जिस आर्थिक ढाँचे के रचना करने में मद्द किया वह स्वतंत्रता अर्थव्यवस्था, मुक्त बाजार और उस पर आधरित जनसमुदायवाद की प्रवृत्ति को बढ़ावा देना था। इसके कारण राज्य के कार्य को सीमित करने का भी ध्येय स्थापित किया गया तथा कहा गया कि राज्य

* अर्थशास्त्र विभाग, एम0बी0एस0पी0जी0 कॉलेज, गंगापुर

केवल रात्रि की चौकदारी को अर्थात् 'जागते रहो' से अधिक कुछ न करे। इसका अभिप्राय यह नहीं था कि आने वाली अर्थव्यवस्था से राज्य के नीति नियमों को अनदेखी करना बल्कि यह स्थापना भी करने का प्रयास हुआ 'समाज औद्योगीकरण की उपज है। इस सूत्र में औद्योगिक उत्पादकों को उपभोक्ताओं से अलग न करने उत्पादन मूल्य के रूप में स्थापना की गई। यह भी स्थापना की गर्व कि अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर विकास की हर संभावनाओं का लाभ सबको मिले अर्थात् दूसरे शब्दों में इसे अनिवार्य तत्व की संकट दी गई। कहाँ एक तरफ पूंजीवादी समान के विघटन का अर्द्धविश्व में एक वैचारिकी का नारा था वहीं पूंजीवादी वैचारिकी ने आर्थिक समाज का निर्माण कर इसे भूमंडलीयकरण की आकृति प्रदान करने में सफलता प्राप्त की। संप्रति प्रश्न है इसका समर्थन किया जाय या नकारा जाय। सबसे बड़ा मुद्दा इसमें प्रभाव के प्रवाह का है। यदि हमें जारी रहने दिया गया तो विकासन्मुख हो शायद आर्थिक क्षेत्र में विकसित नहीं हो पायेंगे तथा उनका विकासोन्मुख बने रहना अंतिम आर्थिक विश्व का विचार अत्यधिक प्रभावी है।

वैश्वीकरण के युग में उपभोगतावादी संस्कृति का विस्तार हो रहा है। सम्पूर्ण विश्व एक बाजार के रूप में परिवर्तित हो रहा है। भू – मण्डलीकरण और बाजारवाद के पुरस्कर्ता और पोषक पूँजीवादी देशों के नव उपनिवेशवादी अभियान में जनता, जन् संस्कृति और जन भाषाओं के लिए कोई स्थान नहीं है। कमजोर पिछड़े और नव स्वतंत्र राष्ट्रों की अस्थिरता और वैविध्य को समाप्त करने में सबसे सशक्त माध्यम संचार सूचना जो बाजारवाद को महत्व देता है।

भारतीय सन्दर्भ में वैश्वीकरण का आशय अपनी अर्थव्यवस्था को विश्व की अर्थव्यवस्था के लिए खोलना है। वास्तव में देखा जाय तो नई अर्थिक नीति (1991) से ही भारत में वैश्वीकरण की शुरूआत मानी जाती है। वैश्वीकरण के कारण हमारा अर्न्तराष्ट्रीय व्यापार में सहभागिता बढ़ा है। अर्न्तराष्ट्रीय व्यापार में वृद्धि के कारण हमें उपयोगी विदेशी वस्तुएँ एंव सेवाएं आसानी से उपलब्ध होने लगी है। जो अब तक आसानी से उपलब्ध नहीं हो पाती थी। इसके कारण हमारे भुगतान संतुलन में सुधार हुआ है। वैश्वीकरण के कारण सबसे अधिक लाभ उपभोक्ताओं को हुआ अर्थव्यवस्था के बन्द दरवाजे खूल गये। जिसके परिणाम स्वरूप कम्पनियों फर्मो के गुणवत्ता में भी सुधार हुआ है। और की मतो में भी कमी आयी है। अब उपभोक्ता पहले से अच्छे वस्तु का चुनाव कर सकते है। भारतीय अर्थव्यवस्था में वैश्वीकरण के कारण रोजगार में भी वृद्धि हुई है। वैश्वीकरण के कारण भारत में अनेक बहुराष्ट्रीय कम्पनियों (MDC) का आगमन हुआ है। बहुराष्ट्रीय कम्पनियों ने भारत में बड़ी मात्रा में पूँजी का निवेश किया है। और भारत की आर्थीक विकास भी काफी आगे बढ़ा हैं। वैश्वीकरण के कारण पूरी दूनिया वैश्विक गॉव बन चुकी है।

संन्दर्भ सूची–

1- United Nations: Multinational Corportions in World Development. ST/ECA/190,1973, P.122
2. सेन, ए.के. : द इकानामिक्स आफ लाइफ एण्ड डेथ, साइटिफिक आमेरिकन, मई 1933
3. अमर्त्यसेन : आर्थिक विकास और स्वातंत्रय (भवानीशंकर) दिल्ली , राज्यपाल प्रकाशन पृष्ठ 50
4. सी. रंगराजन : भारत की अर्थ व्यवस्था के नये आयाम (अनुवाद अल्का मुकेश कौशिक) 2002 दिल्ली राज्यपाल एण्ड संस पृष्ठ 134

●